गीता की प्रासंगिकता

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

गीता भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधि ग्रन्थ है। गीता का महत्व इसी से सिद्ध है कि विश्व की अनेक भाषाओं में जिसका अनुवाद हो चुका है। इसके सिद्धान्त सार्वभौमिक हैं। गीता कौरवों और पाण्डवों का युद्ध ही नहीं है बल्कि जीवन की समस्याओं का समाधान भी इसमें वर्णित है। यह एक जीवन दर्शन है। भगवान कृष्ण का उपदेश जीवन का उपदेश है। इस ग्रन्थ में आत्मा की अजरता, अमरता और शाश्वतता का वर्णन है। भक्ति, ज्ञान और कर्म का समन्वय है। योग की सभी विधियों का वर्णन इस ग्रन्थ में है। इसके अतिरिक्त चारों वर्णों के गुण धर्म , आश्रम व्यवस्था, पुरुषार्थ चतुष्टय का बहुत ही वैज्ञानिक विवचेन इस ग्रन्थ में है। इसीलिए गीता की प्रासंगिकता भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों में है।

महाभारत के युद्ध के समय जब अर्जुन का रथ युद्ध क्षेत्र में आया तो अपने सगे–संबंधियों को देखकर अर्जुन को मोह उत्पन्न हो गया। उनके मोह को दूर करने के लिए भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया है। महाभारत का युद्ध अठारह दिन चला था। इसलिए गीता में अठारह ही अध्याय है। गीता का उपदेश सार्वभौमिक उपदेश है। इसमें कर्त्तव्यबोध, व्यवहारबोध, संबन्धबोध, आत्मबोध, कर्म, ज्ञान और भक्ति का संदेश, जीवन–मरण की सत्यता योग और पर्यावरण जैसे अनेक विषयों का संदेश दिया गया है जो व्यक्ति गीता के संदेश को अपने जीवन में उतार लेता है वह पूर्ण काम हो जाता है।

गीता में जिस आचार की शिक्षा दी गयी है, उसे वर्णाश्रम सिद्धान्तों के आधार पर विभाजित किया गया है। वर्तमान समय में वर्णाश्रम व्यवस्था अत्यन्त विकृत होकर प्रायः टूट चुकी है, और इस समय जो लोग अपने को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कहते हैं, या ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास आदि आश्रमों का नाम लेते हैं, उसका कोई विशेष महत्व नहीं है। गीता में जो चारों वर्णों और आश्रमों का विभाजन किया गया है और उनके जो कर्त्तव्य कर्म बतलाये गये हैं, उसका एकमात्र लक्ष्य सामाजिक सुव्यवस्था और व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक,

बौद्धिक क्षमता का क्रमशः विकास ही है। उसमें प्रत्येक व्यक्ति और समुदाय को उसकी प्रवृत्ति, योग्यता और क्षमता के अनुसार ही काम करने की प्रेरणा दी गयी है, जिससे समाज की व्यवस्था निर्बाध रूप से संचालित हो सके।

काम, क्रोध, मोह और लोभ मानव के आन्तरिक दुर्गुण हैं। इन दोषों का निराकरण करने के लिये गीता में संस्कारों का विधान किया गया है, जिससे मनुष्य को शिष्टता और सदाचार का अभ्यास हो जाय। आचार और व्यवहार को शुद्ध बनाने पर जोर देते हुये गीता में आत्मकल्याण का उपदेश दिया है। समस्त कर्मों का अन्तिम उद्देश्य आत्मा का उत्थान और उद्धार ही माना गया है। आत्मा समस्त कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय तथा उनके विषय, मन, अहंकार, बुद्धि आदि से भी परे है। यह समस्त प्रकृति एक क्षेत्र है और आत्मा क्षेत्रज्ञ है। आत्मा के बन्धन मुक्त होने के लिये शास्त्रो में संन्यास और योग के मार्गों का निरूपण किया गया है। पर जो गृहस्थ गीता में प्रदर्शित दान, अतिथि सत्कार, नित्य, नैमित्तिक आदि कर्त्तव्यों को हार्दिक भाव से पूरा करता है और सत्य आचरण पर दृढ़ रहता है, वह भी निस्सन्देह मुक्ति का अधिकारी होता है।

गीता के प्रथम छः अध्यायों में कर्ममार्ग का वर्णन है। कर्ममार्ग का तात्पर्य है जीवन में कर्म करों किन्तु कर्मफल की इच्छा मत करों। कर्मफल की इच्छा करने से यदि मनोनुकूल फल की प्राप्ति नहीं होती तो प्राणी को दुःख होता है इसलिए फल का त्याग करके कर्म करना चाहिए। जीवन में निराशा का भाव नहीं लाना चाहिए। चारों आश्रमों, पुरुषार्थ, चतुष्टय इत्यादि में कर्म करने की ही प्रेरणा दी गई है। हे मानव तुम कर्मयोगी बनो। बिना कर्म किये मानव का जीवन निष्क्रिय हो जाता है। वह समाज पर भारभूत हो जाता है। इसलिए सदैव कर्म करते रहना चाहिए। दूसरा महत्वपूर्ण संदेश भक्ति मार्ग का है। भक्तिमार्ग का तात्पर्य है श्रद्धापूर्वक ईश्वर में विश्वास करना। ईश्वरार्पण बुद्धि से किया गया कार्य अहंकार को समाप्त कर देता है। इसलिए जो भी कार्य किया जाये वह कर्ता बुद्धि से नहीं बल्कि ईश्वर को समर्पित करके किया जाता है।

गीता में स्वयं भगवान श्रीकृष्ण कहते है कि जो व्यक्ति मुझको सर्वत्र और सभी प्राणियों में मुझको देखता है वह मेरे लिए नहीं मरता और मैं भी उसकी रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहता हूं। यह सम्पूर्ण संसार धागे में मनके की भांति मुझमें पिरोया हुआ है। सभी जीव मेरे अंश है

और मैं सभी में हूं। यही गीता का भक्तिमार्ग है। तीसरा महत्वपूर्ण संदेश ज्ञानमार्ग का है। ज्ञान से तात्पर्य सम्यक् ज्ञान से है।

गीता कहती है कि बिना ज्ञान के मोक्ष की प्राप्ति संभव नहीं। अज्ञानी व्यक्ति संसार में भटकता रहता है। सत्य का स्वरूप उसे दिखलायी नहीं देता। सत्यज्ञान प्राप्त करने के लिए शास्त्रों का अध्ययन, गुरु का सान्निध्य आवाश्यक है। गुरु ही अज्ञान के अंधकार को दूर कर ज्ञान का प्रकाश फैलाता है। जिससे प्राणी में ज्ञान का बीज अंकुरित होता है। इस प्रकार कर्मभक्ति और ज्ञान गीता के मूलमंत्र है। गीता सर्वेश्वरवाद का उपदेश देती है। सर्वेश्वरवाद का अर्थ है सृष्टि के कण–कण में ईश्वर की सत्ता है। सृष्टि का कोई भी स्थान ऐसा नहीं है जहां ईश्वर की सत्ता न हो।